Nav Jyoti, Vol. 5, No. 10, January-June 2017 ISSN : 2249-7331

वर्तमान शैक्षिक तथा सामाजिक परिप्रेक्ष्य में लोकगीत तथा उनका शैक्षिक तत्व

डॉ0 ऋतु भारद्वाज*

लोक–संस्कृति में लोक गीतों का बहुत महत्व है। धार्मिक तथा सामाजिक संस्कारों की पूर्ति में यह सहायक होते हैं। लोकगीतों के अन्तर्गत मानव धर्म, कला, संस्कृति के विकास की कहानी को कहते हैं। लोक कला के साक्षी रूप में अजन्ता तथा एलोरा की गुफाएँ हमारे समक्ष अपनी कहानी आज भी कहते हैं।

लोकगीत देश की संस्कृति के रक्षक है। त्यौहार, उत्सव, के साथ इनका अभिन्न सम्बन्ध है। ये लोक नृत्यों और लोक नाट्यों को भी प्राण देते हैं। ये लोक नृत्यों और लोक नाट्यों को भी प्राण देते हैं। ये देश के रीति–रिवाज तथा मौलिकता को बचाये हुए हैं। पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति का प्रभाव इन्होंने निष्क्रिय किया है, लोकगीत भारत की आत्मा है। सौन्दर्य, समृद्धि तथा आदर्श के चित्र इन्होंने हमारे सामने खीचें हैं इतिहास के लिये तो वह बड़ी मूल्यवान निधि है। कितने ही अलंकारों का वर्णन इनमें मिलता है। लोकगीत हमारे संस्कार, परम्परा, इतिहास की बड़ी पूंजी है।

हमारी भारतीय संस्कृति संसार की आदि संस्कृतियों से सिरमौर है। भारतीय संस्कृति गंगा के समान एक अविरल धारा है। जो अपने आदिकाल में ऋग्वेद से प्रारम्भ होकर समय की भूमि पर चलकर चक्कर लगाती हुए हम तक पहुँची हैं। जिस प्रकार गंगा के स्त्रोत में अनेक नदियाँ तथा धाराएँ मिलती हैं तथा उन सभी नदियों का जल गंगा में मिलकर गंगाजल बन जाता है। ठीक उसी प्रकार हमारी भारतीय संस्कृति रूपी गंगा में भी अनेक संस्कृतियाँ मिली हुयी हैं और वे हमारी संस्कृति में समाहित होकर एक रूप हो गई हैं।

भारतीय संस्कृति के ऐसे वृक्ष की कल्पना करके ही हम शिक्षा रूपी शाखा को पल्लवित कर सकते हैं और भारतीय संस्कृति की एक ऐसी ही अभिन्न शाखा है। हमारी 'लोक–संस्कृति' जो हमारी भारतीय संस्कृति रूपी पेड़ को ओर अधिक विकसित करने में सहयोगी रही है।

समस्त लोक समुदाय का मिलाजुला रूप लोक कहलाता है। इन सबकी मिलीजुली संस्कृति, **लोक संस्कृति** कहलाती है। देखने में इन सबका अलग–अलग रहन–सहन है, वेशभूषा, खान–पान, पहनावा–ओढ़ावा, चाल–व्यवहार, नृत्य, गीत, कला कौशल, भाषा आदि सब अलग–अलग दिखाई देते हैं, परन्तु एक ऐसा सूत्र है जिसमें ये सब एक माला में पिरोई हुई मणियों की भाँति दिखाई देते हैं, यही लोक संस्कृति है। लोक संस्कृति कभी भी शिष्ट समाज की आश्रित नहीं रहती है, उलटे शिष्ट समाज लोक संस्कृति से प्रेरणा प्राप्त करता रहा है। लोक संस्कृति का एक रूप हमें भाव विभव्यक्तियों की शैली में भी मिलता है, जिसके द्वारा लोक–मानस की मांगलिक भावना से ओत–प्रोत होना सिद्ध होता है। वह 'दीपक के बुझने' की कल्पना से सिहर उठता है। इसलिए वह 'दीपक बुझाने' की बात नहीं करता 'दीपक बढ़ाने' को कहता है। इसी प्रकार 'दुकान बन्द होने' की कल्पना से सहम जाता है। इसलिए

* **एसोसिएट प्रोफेसर, वी0आई0एम0टी0, मेरठ**

'दुकान बढ़ाने' को कहता है। लोक जीवन की जैसी सरलतम, नैसर्गिक अनुभूतिमयी अभिव्यंजना का चित्रण लोक गीतों व लोक कथाओं में मिलता है, वैसा अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। लोक साहित्य में लोक मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गीत गुनगुनाती है। लोक जीवन में पग पग पर लोक संस्कृति के दर्शन होते हैं। लोक साहित्य उतना ही पुराना है जितना कि मानव, इसलिए उसमें जन जीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति सभी कुछ समाहित है।

भारतीय लोक संस्कृति की आत्मा भारतीय साधारण जनता है जो नगरों से दूर गाँवों, वन–पर्वतों में निवास करती है। लोक संस्कृति प्रकृति की गोद में पनपती है। लोक संस्कृति एवं लोकोत्तर संस्कृति तथा विश्व की सभी संस्कृतियों का बीज एक ही है। यह बीज लोक संस्कृति ही है।

कन्हैया सो जा रे मत रोवे रे – 2
कन्हैया तुझे बंशी से बड़ा प्यार – 2
मैं बंशी ला दूँगी, मत रोवे रे
कन्हैया सो जा रे मत रोवे रे।।
कन्हैया तुझे माखन से बड़ा प्यार– 2
मैं माखन ला दूँगी मत रोवे रे
कन्हैया सो जा रे मत रोवे रे।।

प्रस्तुत लोकगीत में एक माता अपने बालक को सुलाने का प्रयास करते हुए कह रही है। कन्हैया तुम सो जाओ रोओ मत मैं तुम्हें जो भी चाहिए वह ला दूँगी। इस प्रकार का लोक गीत एक माता का अपने बालक के प्रति मोह को व्यक्त कर रहा है। वह गीत के द्वारा अपने बालक की इच्छाओं को पूरा करने का संदेश दे रही है। इसी प्रकार के गीत तथा कथायें, लोक साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। गांवों में मनोरंजन के लिये स्वांग या नाटक भी खेले जाते हैं। जिन्हें देखने के लिए लोग दूर–दूर से आते हैं। गांव के लोग अपने दैनिक व्यवहार से सैकड़ों मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग करते हैं।

शैक्षिक तत्वों की विशिष्ट भूमिका में लोकगीत प्रत्येक के लिये अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयुक्त होते हैं। लोकगीतों द्वारा शिक्षा अनौपचारिक तरीके से सम्पन्न होती है। यह किसी विशेष समय पर, विशेष स्थान या विशेषज्ञ द्वारा नहीं होती है। अपितु यह तो प्राकृतिक शिक्षा का साधन है। लोकगीत अपनी समग्र वैशिष्ट्य के साथ शिक्षार्थियों के शिक्षाक्रम में भी सम्यक् स्थान पाने का अधिकारी है। क्योंकि शिक्षा के महत्व उद्देश्यों, जिनकी प्राप्ति हमें अर्न्तराष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर मानवीय संवेगों की भूमिका में करने की कामना करते हैं। उनकी पूर्ति लोक गीतों द्वारा ही सम्भव है।

जन जीवन की भावनाओं का विकास

बेटी की विदाई अवध, मिथिला, भोजपुर, मगध आदि में जिस तरह हृदय विदारक होती है उसी तरह दक्षिण के क्षेत्रों में भी होती है। विदाई गीत भारत के विभिन्न प्रान्तों के लोकगीतों में समान रूप से गाये जाते हैं। ऐसा ही एक विदाई का लोकगीत जिसमें कन्या द्वरा अपने परिवार को छोड़कर ससुराल जाने का वर्णन किया गया है। इसमें सखियाँ अपनी प्रिय सखी की विदाई पर अश्रु बहा रही हैं तथा गीत गाकर उसे शुभकामनाएँ दे रही हैं।

हमारी जन्म भूमि से, विदाई होने वाली है,
नमस्ते लीजिये लाडो, सवारी चलने वाली है।

कभी चिटठी, कभी पत्रर खबर मेरी भी ले लेना
भेजकर बाबा की गाड़ी, कभी मुझको मंगा लेना।

लोक गीतों में समान रूप से ही अनुभूति होती है तथा समान ही पीड़ा है। करूणा की ऐसी अश्रुपूरित तस्वीर अन्य के लोकगीतों में सर्वथा विरल है। ऐसा प्राचीन काल से ही चलता आ रहा है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक लोकगीत जन–जीवन की भावनाओं की अभिव्यक्ति करते रहे हैं।

लोकगीत एक पथ–प्रदर्शक

लोकगीत हमारे जीवन में पथ–प्रदर्शक का कार्य करते हैं। इनमें शैक्षिक तत्व निहित रहते हैं ये जन–साधारण को कार्य करने के लिये भी प्रेरित करते हैं। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में ये गीत सामाजिक मूल्य रखते हैं। मानव–जीवन को अभिप्रेरित करना भी इनका प्रमुख कार्य होता है। एक आलसी व्यक्ति को कार्य करने के लिये लोकगीत इस प्रकार प्रस्तुति देते हैं :–

सोने सोने में सोने सा जीवन व्यर्थ गुजारा है
अब तो पगले नींद छोड़ दे बचा काल नक्कारा है
बचपन खेलकूद में खोया, गयी जवानी भोगों में,
जीवन के दिन यूं ही बीत गये, रंग रंगीले ख्वाबों में,
पड़ी झुर्रियां अब चेहरे पर, बदन कांपता सारा है
अब तो पगले नींद .....

यह लोक गीत मानव को जीवन का सार समझाने का प्रयास करता है कि जीवन अनमोल है तथा समय का सदुपयोग करके जीवन को सफल बनाने की प्रेरणा प्रदान करता है।

लोकगीतों के अन्दर देश की धड़कन गूंजती रहती है। देश के जन–जीवन में कब कैसे कड़वे–कसैले दिन आयें ये लोकगीत प्रस्तुत करते हैं। श्रोता इन्हें सुनकर संवेदनशील तो होंगें ही साथ ही इतिहास के तथ्यों से भी परिचित होंगें। प्रचारमूलक गीतों से हमें परहेज रखना आवश्यक है। क्योंकि इन गीतों में मानवीय एवं सामाजिक पक्ष बड़ा ही दुर्बल होता है।

इस प्रकार के लोकगीत ही महत्वपूर्ण होते हैं जिनके माध्यम से एक सजग नागरिक भावना का विकास हो सके। इतिहास के पन्ने लोकगीतों में सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। लोकगीतों से देश और समाज के परिवेश, प्रकृति, परम्परा और प्रवृत्तियों पर प्रचुर प्रकाश पड़ता है ऐसे लोकगीत शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी है।

लोक कला में अभिव्यक्ति के लिये स्वतन्त्रता उसी प्रकार महत्वपूर्ण है जिस प्रकार जीवन के लिये प्राण। इसमें अभिव्यक्ति को ही सृजन कहा जाता है। अमूर्त अनुभूति को मूर्त रूप प्रदान करना ही कला की अभिव्यक्ति है। जिसमें कल्पना तथा रूप दोनों ही तत्व शामिल होते हैं। उसी को कलात्मक सौन्दर्य कहते हैं। लोककला का अन्तिम ध्येय सौन्दर्यानुभूति है। जिसे प्रत्येक श्रोता या दर्शक आनन्द की प्राप्ति के समय अनुभव करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. महामहोपाध्याय कविराज गोपी नाथ – ''भारतीय संस्कृति में लोक जीवन की अभिव्यक्ति''
2. श्री पराशर सत्यप्रकाश – 'संगीत शिक्षण' (अध्याय–1)
3 अग्रवाल जे0सी0 – ''विकासशील भारत में शिक्षा''
4 अग्रवाल आर0ए0 – ''भारतीय चित्रकला का विवेचन''
5 श्री मुदगल विनय चन्द्र – संगीत बच्चों के लिए
6 श्रीमति सक्सेना संतोष – भारत में संगीत